धर्म जोड़ता है, तोड़ता नहीं

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

धर्म सबको एक साथ लेकर आगे बढ़ता है। मार्ग में जितने भी लोग आते हैं वह सब इससे जुड़ते जाते हैं। इसलिए कहा जाता है कि धर्म में धारण करने की शक्ति होती है। मानव जीवन में अच्छाइयां और बुराइयां दोनों होती हैं। धर्म अच्छाई और अधर्म बुराई की ओर ले जाता है। मानव का विवेक ही सबसे बड़ा धर्म है। धर्म एक–दूसरे को जोड़ता है। इसीलिए कहा गया है कि वस्तु का स्वभाव ही धर्म है। पानी का स्वभाव शीतलता है और अग्नि का स्वभाव उष्णता। स्वभाव कभी बदलता नहीं। नीम की कडवाहट को कभी दूर नहीं किया जा सकता चाहे उसे सौ घड़े दूध से सींचा जाये। धर्म एक ऐसा साबुन है जो आत्मा के कर्म रज को धो डालता है। मन, वचन और काया से जगत के सभी प्राणियों के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करना, सभी के साथ मैत्री का व्यवहार करना धर्म है। किसी को कष्ट देना अधर्म और पाप है। धर्म एक संजीवनी है। धर्म अमृत है। समाज को सुधारने के लिए धर्म एक महान मार्ग है। धर्म ही समाज को एकसूत्र में बांधता है। अधर्म का मार्ग समाज को पतन की ओर ले जाता है। मैत्री, प्रमोद, करूणा, सद्भावना, शांति, समता ओर परोपकार धर्म का मार्ग है।

भारत एक धर्म प्रधान देश है। यहां धर्म की अनेकों परिभाषाएं की गयी हैं। मनुष्य के ऊपर जब कोई विपत्ति या आपदा आती है तो वह धर्म की शरण में जाता है और अपने ईष्टदेव या ईश्वर का स्मरण करता है। इससे तो यह सिद्ध है कि धर्म मानव को त्राण देता है। धर्म का द्वार सभी के लिए खुला है। जब हम देवालय जाते हैं तो बड़े मनोयोग से ईश्वर का स्मरण करते हैं। धर्म को सम्प्रदाय में विभक्त कर दिया गया है और सभी अपने–अपने धार्मिक मान्यताओं के अनुसार पूजा–पाठ करते हैं। धर्म की दृष्टि से न तो कोई छोटा है या बड़ा, सभी समान है। प्रकृति सबके साथ समान व्यवहार करती है। सूर्य का प्रकाश सभी मजहब के मानने वाले, सभी धर्मों के लोग समान रूप से ग्रहण करते हैं। कोई यह नहीं कहता कि यह प्रकाश हमारा है और यह प्रकाश तुम्हारा। गरीब और अमीर के बीच भेद यहां पर नहीं रहता। नदियों में प्रवाहित होने वाला जल मानव पशु, पक्षी सभी के लिए समान रूप से उपयोग करने

के लिए है। नदी कभी भी यह नहीं कहती कि यह जल गरीबों के लिए है या अमीरों के लिए है। इस प्रकार प्रकृति सदैव मनुष्य पशु–पक्षी, दानव, मानव सभी के साथ समान व्यवहार करती है। धर्म भी एक ऐसा तत्व है जहां पर लघुता, गुरूता का कोई भेद नहीं रहता है। धर्म की शरण में भेद समाप्त हो जाता है।

धर्म बहुत ही व्यापक शब्द है। इसके अंतर्गत भावों की शुद्धता, मन की निर्मलता और सात्विक विचार का अधिक महत्व है। धर्म मूलतः किसी वस्तु का सहज गुण है। जैसे पानी का धर्म शीतलता, अग्नि का धर्म उष्णता और पृथ्वी का धर्म गंध है। इसी प्रकार जितने भी पदार्थ हैं उन सबका स्वाभाविक धर्म होता है। जब पदार्थों में विकृति उत्पन्न की जाती है तो उनके गुण धर्म भी बदल जाते हैं। आत्मा एक ऐसा तत्व है जिसमें किसी प्रकार की विकृति नहीं आती है। यह अपने स्वरूप में चैतन्य युक्त है। शेष जितने भी पदार्थ हैं वे भौतिक तत्व हैं। उन पदार्थों में परिवर्तन, परिवर्धन होता रहता है। आत्मा और जड़ का जब संयोग होता है तो जड़ पदार्थ भी आत्मवत प्रतीत होने लगता है। शरीर जड़ है और आत्मा चेतन। शरीर से जब आत्मा का संयोग होता है तो जड़ शरीर भी आत्मवत् प्रतीत होने लगता है। शरीर से अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कार्य किये जाते हैं। मूलतः आत्मा के शुद्धि और अशुद्धि का कोई प्रश्न नहीं है। शरीर में शुद्धता और अशुद्धता देखी जाती है। यदि मानव अच्छा कर्म करता है तो पुण्यलोक की प्राप्ति होती है और यदि बुरा कार्य करता है तो उसे नरक की प्राप्ति होती है। इसीको ध्यान में रखकर यह बात कही गयी है कि धर्म आत्मा को शुद्ध करता है। आत्मा को न तो आंखों से देखा जा सकता है, न वाणी से कहा जा सकता है, न तो अन्य इन्द्रियों से उसे जाना जा सकता है, न तपस्या और कर्म से ही उसे जाना जा सकता है। जिसके द्वारा सारी ज्ञानेन्द्रियां अपने–अपने विषय का ज्ञान कराती हैं उसे किस साधन से जाना जाय। इसलिये कहा गया है कि 'ज्ञानप्रसादेन तं पश्यते' अर्थात् ज्ञान के द्वारा ही उसे जाना जा सकता है। जप, तप निखिलकर्मानुष्ठान ये सारे साधन आत्मविषयक आचार में परिगणित हैं, किन्तु ये केवल चित्त शुद्धि तक ही सीमित हैं। शुद्ध चित्त में ज्ञान का प्राकट्य उसी प्रकार होता है जैसे स्वच्छ कांच में प्रतिबिम्बोपलब्धि होती है। पुरुष या आत्मा को चेतन तत्त्व तथा प्रकृति को अचेतन या जड़तत्त्व कहा गया है। इस तथ्य की सत्यता को हृदयंगम कर भारतीय

ऋषियों ने अपने वेद ज्ञान के संस्मरणों, निष्कर्षों को स्मृति शास्त्र के रूप में मानव समाज के हितार्थ प्रगट किया। जिससे वे भोगवाद की आसुरीधारा में न बहकर आत्मकल्याण का सर्वप्रथम ध्यान रखें और अर्थ तथा काम के साथ ही धर्म और मोक्ष के साधन के लिये भी प्रयत्नशील रहें।

मनुष्य का आध्यात्मिक विकास तभी सम्भव है, जब वह अपना आचरण शुद्ध रखे और संयम नियम का पालन करता रहे।